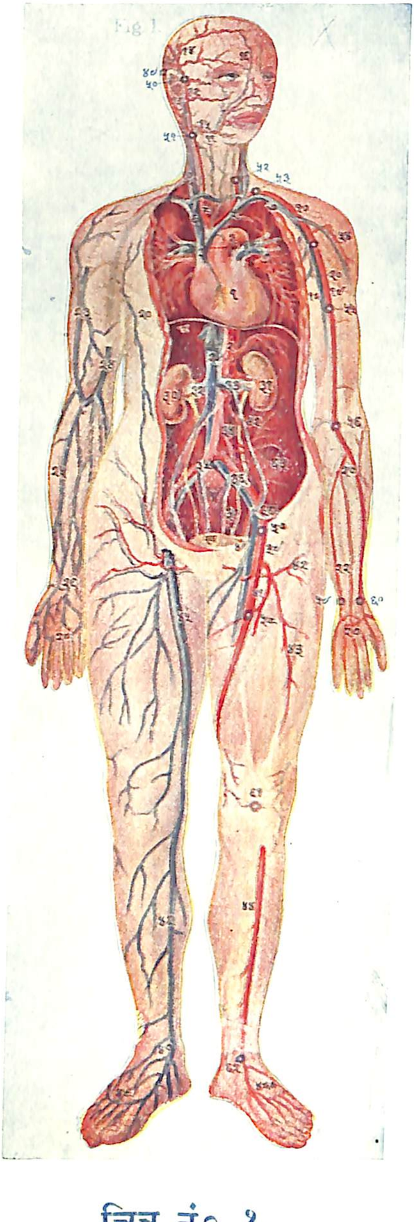
मानव-शरीर का आंतरिक दृश्य



चित्र नं० १.

स्वास्थ्य-रक्षा

प्रथम भाग

पहला अध्याय

अस्थिपंजर (Skeleton)

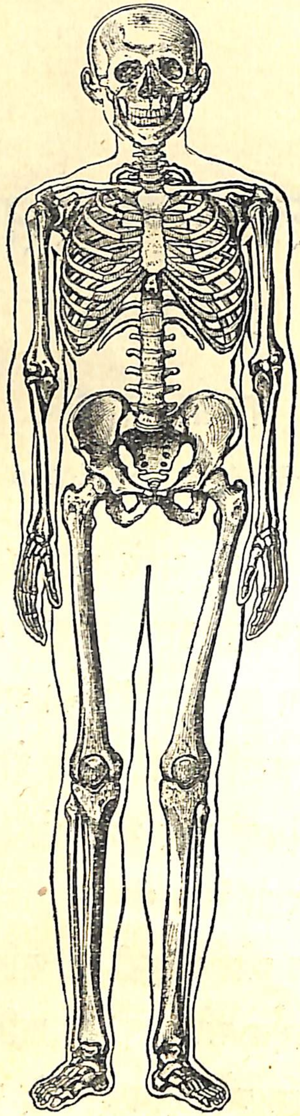
मनुष्य के शरीर में सबसे अधिक बलिष्ठ अस्थियाँ हैं। इन्हीं अस्थियों के द्वारा सम्पूर्ण शरीर के कोमल और नाज़ुक अंग सुरक्षित रहते हैं। अस्थिपंजर के चित्र का अवलोकन करने से यह प्रतीत होता है कि मनुष्य की समस्त अस्थियाँ चार भागों में विभाजित की जा सकती हैं। (देखो चित्र नं० २)

प्रथम—मुख और खोपड़ी की अस्थियाँ

द्वितीय—गर्दन और धड़ की अस्थियाँ

तृतीय—बाहु और हाथ इत्यादि की अस्थियाँ

चित्र नं० २



अस्थिपंजर

चतुर्थ—कूल्हा, टाँग और पाँव इत्यादि की अस्थियाँ

१—खोपड़ी में ८, मुख में १४, कान में ६, दाँत ३२।

२—रीढ़ में २६, छाती में २५, जिह्वा १, पृष्ठवंश में ४, कूल्हे में २।

३—बाहु में ६, पहुँचे और कलाई में २०, हाथ में ३८।

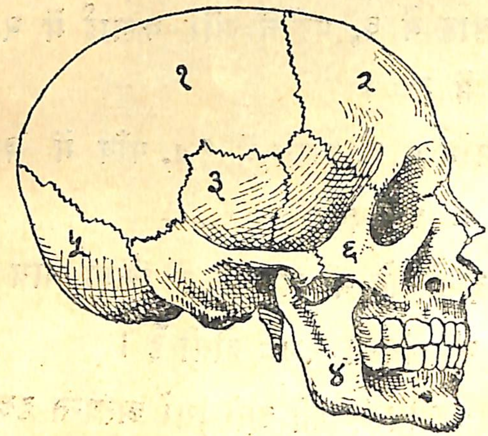
४—टाँग में ६, टखने में १४, पाँव में ३८ अन्य ८ अस्थियाँ।

यदि दाँतों को भी सम्मिलित किया जाय तो कुल अस्थियों की संख्या २४८ होती है।

प्रथम—खोपड़ी की अस्थियाँ अत्यन्त दृढ़ हैं और एक दूसरे से इस प्रकार जुड़ी रहती हैं जैसे आरे के दाँत एक दूसरे के अन्दर जाकर मिल जाते हैं। इनमें से ६ अस्थियाँ चपटी होती हैं—एक माथे की ललाट अस्थि, दो कनपटी की, दो कनपटी के ऊपर की और एक खोपड़ी में पीछे की ओर रहती है। शेष सब अस्थियाँ भिन्न-भिन्न आकार की होती हैं।

मुख की अस्थियों में नीचे के जबड़े की अस्थि अलग होती है। यह अस्थि अत्यन्त दृढ़ और चेहरे की सब अस्थियों से मोटी होती है और कमान के आकार की होती है। ऊपर के जबड़े की अस्थियों में नाक, गाल

चित्र नं० ३.

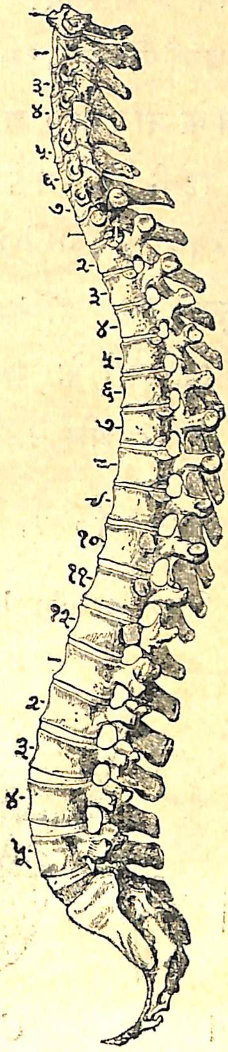


और तालु की अस्थियाँ सम्मिलित हैं। जब यह अस्थि खोपड़ी की अस्थि से जाकर मिलती है तो उसमें दो छिद्र शेष रह जाते हैं, जो नेत्रों के स्थान हैं। (देखो चित्र नं० ३)

द्वितीय—गर्दन और धड़ की अस्थियाँ, जिसमें रीढ़ की अस्थियाँ, पसलियाँ और पृष्ठ-वंश की अस्थियाँ

चित्र नं० ४.

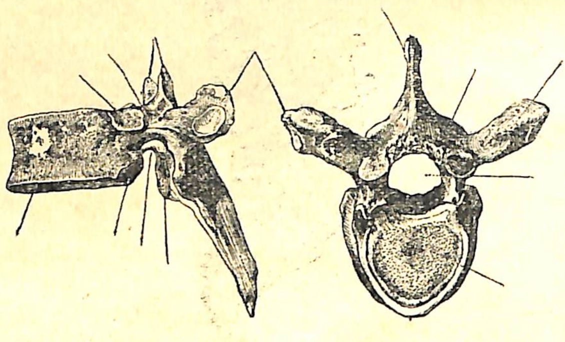
Vertebral column



सम्मिलित हैं। रीढ़ की अस्थियाँ कशेरुक (Vertebral) कहलाती हैं। जिनमें ७ अस्थियाँ तो गर्दन से संबंध रखती हैं, १२ अस्थियाँ पीठ में हैं, इसके नीचे ५ अस्थियाँ हैं और उसके नीचे के भाग में ५ अस्थियाँ और हैं, जो एक दूसरे से जुड़ी रहती हैं। उसके नीचे चार अस्थियाँ हैं, जो पँछ की अस्थियाँ (Tail bone) कहलाती हैं। सब मिलाकर कुल ३३ अस्थियाँ होती हैं। ऊपर की २४ अस्थियाँ एक दूसरे के समानाकृति की होती हैं। (देखो चित्र नं० ३ और ४.)

चित्र नं० ५.

One vertebral

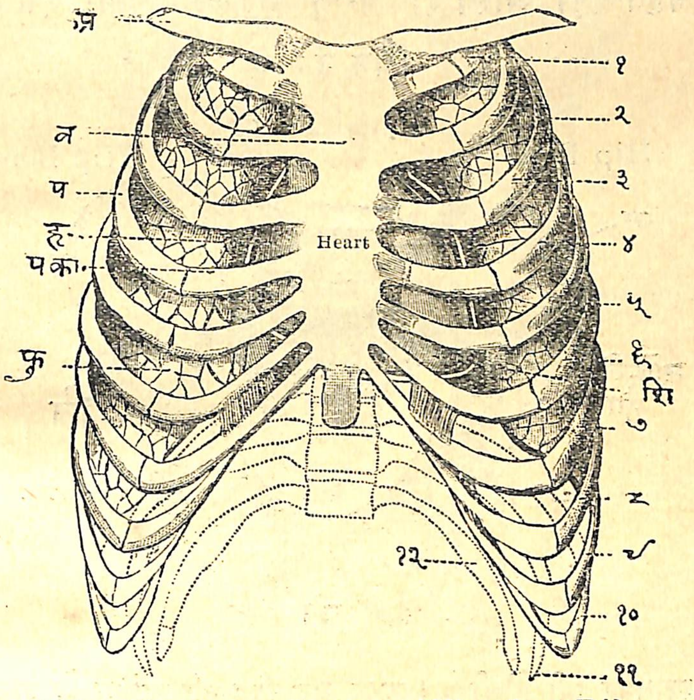


Horizontal Upright

पसलियाँ—ये प्रत्येक ओर संख्या में १२ होती हैं, जो पीछे की ओर कशेरुकों से जुड़ी होती हैं।

चित्र नं० ६.

Ribs, heart and lungs



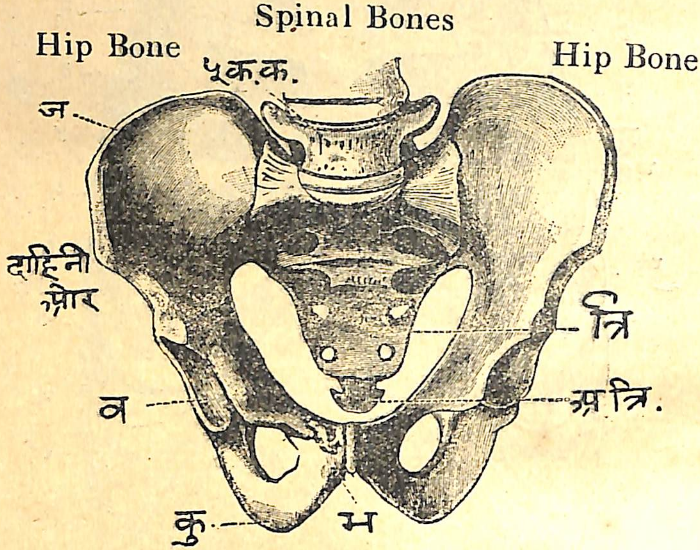
Ribs Nos. 11 and 12 are Floating Ribs

आगे की ओर केवल १० अस्थियाँ वक्षास्थि (Sternum) से आकर मिलती हैं, शेष दो पसलियाँ केवल पृष्ठ-वंश के कशेरुकों से ही मिली रहती हैं और आगे की ओर

नहीं मिलती हैं। इसी कारण इनको स्वतंत्र पर्शुका कहते हैं। (देखो चित्र नं० ६)

पर्शुकाओं की अस्थियाँ—ये कई कोणवाली एक बहुत बड़ी अस्थि है; परन्तु यह दोनों ओर एक ही

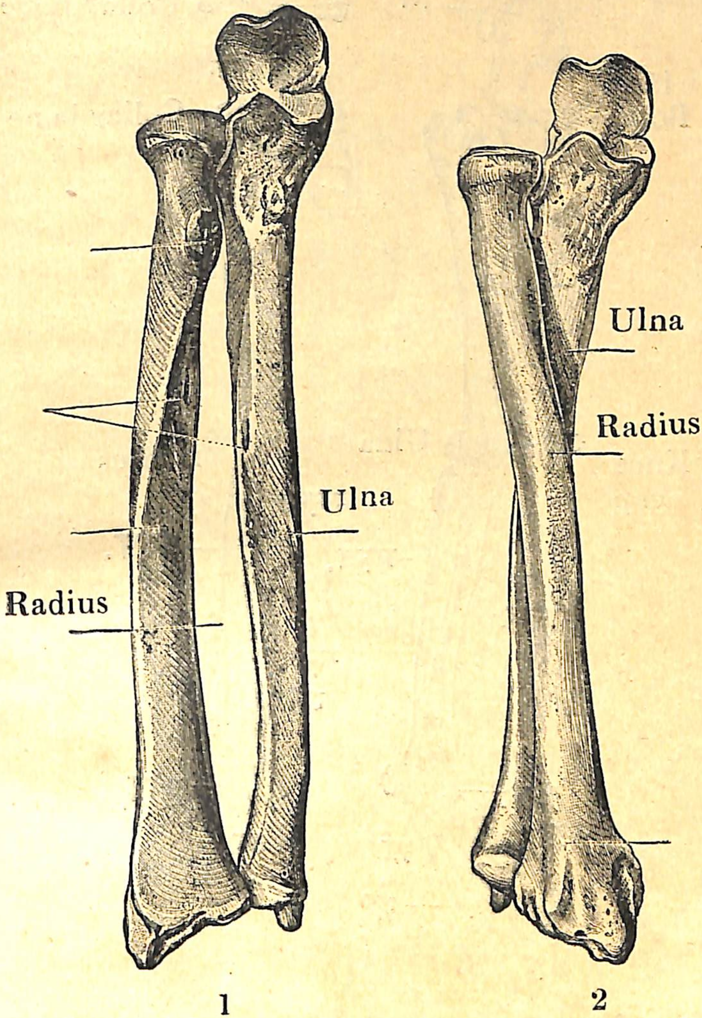
चित्र नं० ७.



आकार की होती है। ऊपर यह रीढ़ की अस्थि से जुड़ी रहती है और इसी में एक गोल छिद्र होता है जिसमें जाँघ की अस्थि जाकर मिलती है और उसी छिद्र पर घूमती है। (देखो चित्र नं० ७)

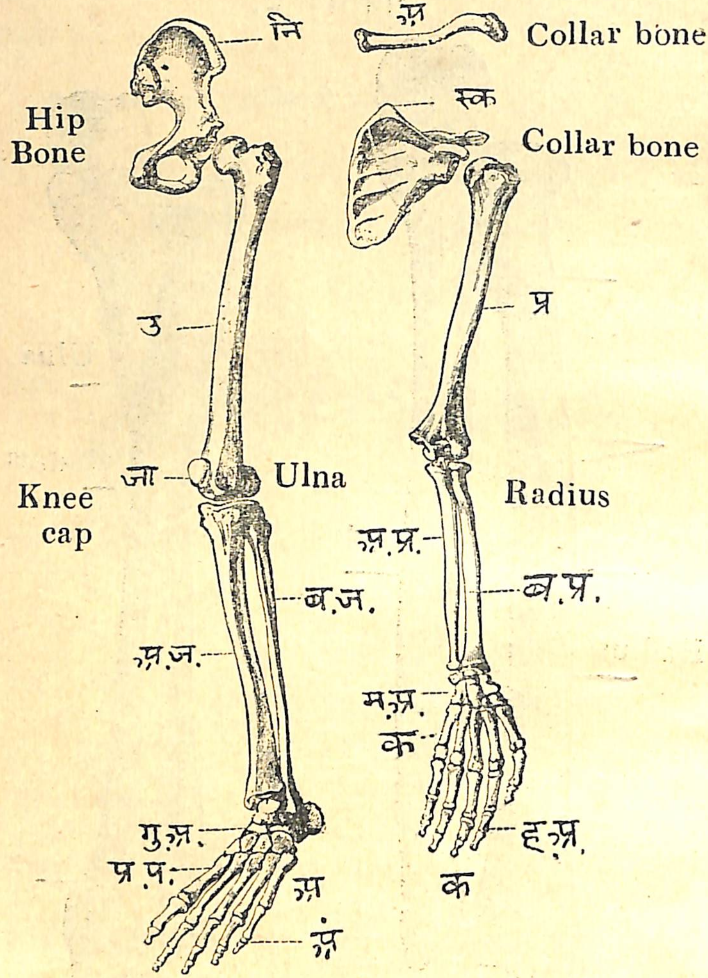
तृतीय--बाहु और हाथ इत्यादि की अस्थियाँ।

चित्र नं० ८.



No. 2. Shows radius upon ulna where the forearm is turned.

चित्र नं० ६.



पैर
चित्र नं० ६ (अ)

हाथ
चित्र नं० ६ (ब)

चतुर्थ--टाँग और पाँव आदि की अस्थियाँ।

इन दोनों की बनावट में बहुत थोड़ा अन्तर होता है, जो निम्न लिखित ब्योरे से ज्ञात हो जायगा।

बाहु इत्यादि की अस्थियाँ

अग्र बाहु में २ अस्थियाँ

बाहु में १ अस्थि

कलाई में ८ अस्थियाँ

हथेली में ५ अस्थियाँ

हाथ की उँगलियों में १४ अस्थियाँ

देखो चित्र नं० ६ (ब)

जाँघ, टाँग आदि की अस्थियाँ

टाँग में २ अस्थियाँ

जाँघ में १ अस्थि

टखने और एड़ी में ७ अस्थियाँ

पैर के पंजे में ५ अस्थियाँ

पैर की उँगलियों में १४ अस्थियाँ

(प्रत्येक उँगली में ३ और अँगूठे में २)

देखो चित्र नं० ६ (अ)

दूसरा अध्याय

शरीर के जोड़ और संधियाँ

जोड़ दो प्रकार के होते हैं। प्रथम वह जिनमें कोई गति नहीं होती, दूसरे वह जिनमें गति होती है और जो चार प्रकार के होते हैं:—

१—फिसलनेवाले—इनमें गति बहुत कम होती है, जैसे एक रीढ़ की अस्थि दूसरी रीढ़ की अस्थि पर रखी हुई है। इनके बीच में एक नर्म झिल्ली का अस्तर लगा रहता है।

२—कब्ज़े की संधि (Hinge joint), जैसे दरवाज़े की गति होती है, यह केवल आगे और पीछे घूम सकता है।

३—कटोरी की संधि (Ball and socket) यह चारों ओर घूम सकती है।

४—कीली की संधि (Pivot joint), जैसे

अग्र बाहु की गति, जिसमें एक अस्थि दूसरी अस्थि के ऊपर आ जाती है।

देखो चित्र नं० ८ और ९ (ब)

जहाँ गति की आवश्यकता नहीं होती वहाँ ईश्वर ने अस्थियों के सामने के किनारों को इस प्रकार बनाया है कि संधि होते हुए भी उनमें गति नहीं होती और जिन संधियों में गति की आवश्यकता होती है, उन अस्थियों के सम्मुख छोरों को एक सफ़ेद चमकीली रेशेदार वस्तु से जोड़ा है, जिसको कारटिलेज (Cartilage) कहते हैं। जिससे अस्थियों के सामने के छोर गति करते समय एक दूसरे से रगड़ न खायँ। इनमें से एक प्रकार का तेल भी उत्पन्न होता रहता है, जो इन संधियों को तर और चिकना रखता है। जब तुम्हारी बाइसिकल ठीक नहीं चलती तो तुम उसमें तेल डालते हो, अगर शरीर में ईश्वर ने यह तेल इस भाँति उत्पन्न न किया होता तो हमको कभी इस बात का अनुभव भी न होता और वे संधियाँ जो सदा हमारे उपयोग में आती हैं, एक दूसरे से रगड़ खाकर घिस जातीं और

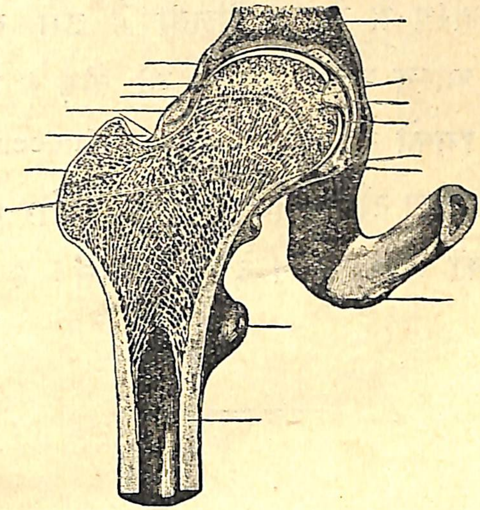
हमारा जीवित रहना कठिन हो जाता। यहाँ हम केवल बड़ी-बड़ी संधियों का वर्णन करते हैं—

कंधे की संधि—बाहु की अस्थि का ऊपरी भाग गोल होकर कंधे और हसली की अस्थि से जाकर मिलता है। इसमें एक गोल छिद्र होता है और बाहु का ऊपरी भाग जो गेंद की भाँति गोल होता है, इस छिद्र के अन्दर जाकर घूमता है। कड़ी रस्सी के सदृश बंधनों (Ligaments) द्वारा अस्थियाँ अपने स्थान से हटने नहीं पातीं और न उनके घूमने में कोई कठिनाई ही पड़ती है। और ये चारों ओर सरलता से घूम सकते हैं। देखो चित्र नं० ६ (ब)

कूल्हे की संधि—यह कंधे की संधि के सदृश होती है। इसमें जाँघ की अस्थि कूल्हे की अस्थि से मिलती है। यह भी चारों ओर सरलतापूर्वक घूम सकती है; परन्तु इतनी अधिक नहीं जितनी कि बाहु की, क्योंकि इसकी कटोरी अधिक गहरी होती है। दूसरे, कूल्हे की अस्थि में कोई गति नहीं होती जिस प्रकार कि कंधे की अस्थि में होती है।

चित्र नं० १०.

Hip joints



कोहनी की संधि—यह कब्ज़े की संधि है। ऊपर की बाहु नीचे की बाहु की दोनों अस्थियों से आकर मिलती है। अग्र बाहु की अस्थियाँ रेडियस (Radius) और अलना (Ulna) कहलाती हैं। अलना भीतर की ओर होती है। यह दरवाज़े के सदृश केवल आगे और पीछे घूम सकता है। जब हाथ को मोड़ते हैं, तो रेडियस अलना के ऊपर आ जाता है।

घुटने की संधि—यह कोहनी की संधि के सदृश होती है। अन्तर केवल इतना है कि जहाँ जाँघ की अस्थि टाँग की अस्थि से आकर मिलती है उस स्थान पर एक गोल अस्थि और होती है, जो जोड़ के ऊपर रखी रहती है। इसको घुटने की चपनी (Kneecap) कहते हैं। इसी कारण टाँग केवल पीछे की ही ओर मुड़ सकती है, ऊपर की ओर नहीं। देखो चित्र नं० ६ (अ)

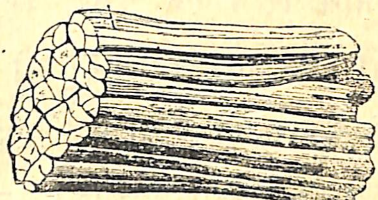
तीसरा अध्याय

मांस और पेशियाँ.

मनुष्य का सम्पूर्ण अस्थि-पंजर मांस से ढका रहता है और उसके ऊपर एक चर्म रहता है। मांस लाल रंग

चित्र नं० ११.

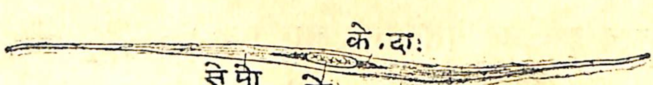
A Big Muscle



की पेशियों का बना होता है। यदि एक बड़ी पेशी को पृथक् करके ध्यानपूर्वक देखा जाय तो वह लंबे-लंबे महीन मांस-पेशी का लोंदा दृष्टिगोचर होगी। यदि आप

चित्र नं० १२.

A fibre of muscle



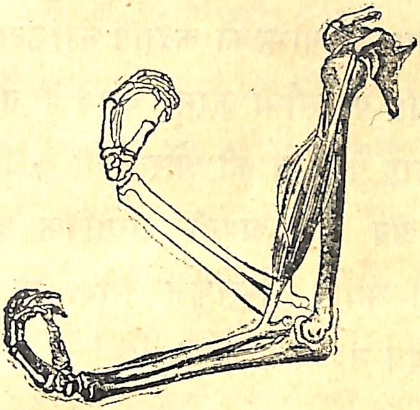
चाहें तो यह और भी महीन लंबी-लंबी पेशियों में विभाजित की जा सकती है (देखो चित्र नं० १२)।

जब हम किसी अंग को हिलाना चाहते हैं, तो इन्हीं पेशियों द्वारा उनको हिला सकते हैं। इनके सिकुड़ने से अंग सिकुड़ जाता है और इनके फैलने से अंग फैल जाता है। इन पेशियों के सिरे टेन्डनों (Tendon) द्वारा दूसरे अंग से जुड़े रहते हैं, जिससे वे अपने स्थान से हिल नहीं सकते। अस्थि के टूट जाने पर वे एक दूसरे पर आ जाते हैं और कभी-कभी मांस काट कर बाहर भी निकल आते हैं। पेशियाँ दो प्रकार की होती हैं। एक जीवित और दूसरी मृतक। जीवित पेशी चमकीली, नर्म और लाल रंग की होती है, खींचने से बढ़ जाती है; परन्तु छोड़ने पर ज्यों की त्यों हो जाती है। मृतक पेशी में यह बात नहीं होती। यह कड़ी होती है, स्पर्श करने या सुई चुभोने से सिकुड़ती भी नहीं। मांस-पेशी व्यायाम करने से कड़ी और मजबूत हो जाती है।

अब हम यह बतलाना चाहते हैं कि बाहु की गति किस भाँति होती है। इसके द्वारा आपको यह भी

चित्र नं० १३.

Position when the arm is raised.



भली भाँति ज्ञात हो जायगा कि शरीर के दूसरे अंगों की गति कैसे होती है। बाहु की अस्थि के ऊपर जो मांस-पेशी होती है, उसके ऊपरी भाग में दो टेन्डन होते हैं और नीचे की ओर एक, जो रेडियस से जुड़ा रहता है। जब हम बाहु को सिकोड़ना चाहते हैं, तो यह मांस-पेशी सिकुड़ती है, और अग्र बाहु की अस्थि मय हाथ और उस बोझ के जो हाथ में हो, ऊपर को उठ जाती है; क्योंकि यह टेन्डन कोहनी के पास

ही मिलता है। इसलिये तनिक सिकुड़ने पर भी अग्र बाहु उठ जाता है। यदि हाथ में बोझ अधिक हो और आपके मांस-पेशी में इतना बल न हो कि वह सिकुड़ सके तो आप उस बोझ को कदापि नहीं उठा सकते। जब हम अग्र बाहु को सीधा करना चाहते हैं तो वह मांस-पेशी जो बाहु के नीचे की ओर होती है, सिकुड़ जाती है और अग्र बाहु अपनी वास्तविक दशा में हो जाता है। अर्थात् बिलकुल सीधा हो जाता है। (देखो चित्र नं० १३)

चौथा अध्याय

शरीर के भीतरी अंग

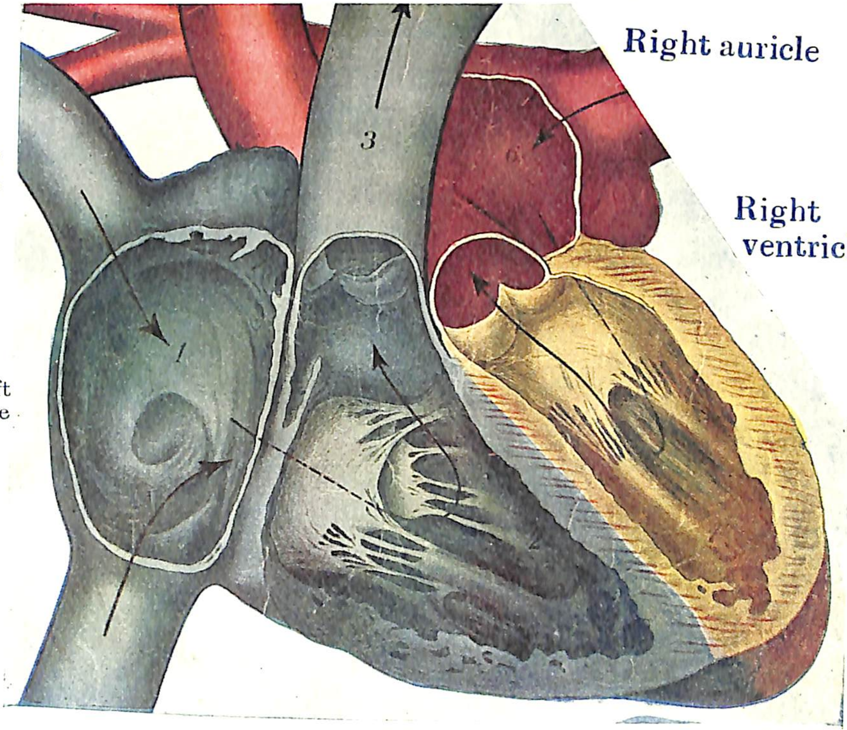
मनुष्य जीवन का आधार उसके भीतरी अंगों पर ही निर्भर है। ईश्वर ने इस शरीर के अन्दर ऐसे-ऐसे यन्त्र बनाए हैं, जिनका मनुष्य कभी ध्यान भी नहीं करता है। उसको जब भूख लगती है, वह भोजन कर लेता है और जब प्यास लगती है तब पानी पी लेता है। शरीर के अन्दर जाकर इन सबका क्या होता है, ये किस भाँति हमारे शरीर में बल उत्पन्न करते हैं, इन सब बातों को हर एक मनुष्य आसानी से नहीं समझ सकता। यहाँ हम शरीर के भीतरी अंगों में से केवल मुख्य अंगों का ही वर्णन करेंगे। मुख्य अंग ये हैं—हृदय, फुसफुस व फेफड़े, प्लीहा, यकृत, वृक्क, मूत्राशय और आमाशय इत्यादि (देखो चित्र नं० १)।

वक्षस्थल के अन्दर हृदय और फेफड़े दो मुख्य अंग हैं। ये बहुत कोमल हैं और मनुष्य-जीवन के आधार हैं।

इसी कारण ईश्वर ने इनको दृढ़ अस्थि-पंजर के अन्दर सुरक्षित रक्खा है, जिससे कि बाहर से इनको कोई हानि न पहुँच सके।

हृदय (Heart)

यह रक्त-परिभ्रमण का केन्द्र है। यहीं से समस्त शरीर में रक्त पहुँचता है जब रक्त नीले रंग का हो जाता है तब फिर हृदय में ही वापस आ जाता है। हृदय ५ इंच लंबा, ३½ इंच चौड़ा और २½ इंच मोटा होता है। इसका भार लगभग ५ छटाँक के होता है। हृदय चार कोठरियों में विभक्त है। प्रत्येक कोठरी एक मिनट में १५ बार धड़कती है। हृदय की धड़कन उस समय पूरी समझी जाती है, जब उसके चारों भाग सिकुड़ कर अपना-अपना काम पूरा कर चुकते हैं। इसके ऊपरी भागों को दाहिना और बायाँ अलिन्द (Auricle) कहते हैं और नीचे के भागों को दाहिना और बायाँ निलय (Ventricle) कहते हैं। दोनों अलिन्द एक साथ सिकुड़ते हैं और दोनों निलय भी एक ही साथ सिकुड़ते हैं। (देखो चित्र नं० १४.)



Left ventricle

चित्र नं० १४.

रक्त-परिभ्रमण के समय हृदय का क्या कार्य है, यह आपको पाँचवें अध्याय में भली भाँति बतलाया जायगा। यहाँ पर केवल इतना लिखना ही उचित है कि हृदय का मुख्य कार्य रक्त को पम्प करके सम्पूर्ण शरीर में पहुँचाना है। सम्पूर्ण शरीर का रक्त एकत्रित होकर फिर हृदय में आ जाता है। इसके बायें भाग में अशुद्ध रक्त रहता है और दाहिने भाग में शुद्ध। हृदय में दो प्रकार के शब्दाघात होते हैं। एक उस समय जब निलय सिकुड़ते हैं। यह शब्द लब (Lub) का होता है और दूसरा उस समय जब रक्त समस्त शरीर को भेजा जाता है और हृदय के छिद्र (Valve) बन्द होते हैं। यह शब्द कुछ तीव्र और डप (Dup) का होता है

फेफड़े व फुसफुस (Lungs)

चित्र नं० ६ के देखने से यह ज्ञात होता है कि हृदय के चारों ओर वक्ष की पसलियों के भीतर एक वस्तु स्पञ्ज के सदृश होती है। इसका आकार गाय की पूँछ की तरह ऊपर को सकरा और नीचे को चौड़ा होता है। इसका रंग गुलाबी होता है, जिसमें काले

रंग के धब्बे होते हैं। फेफड़ों के सिकुड़ने और फैलने ही के कारण मनुष्य साँस लेता है। फुसफुस दो हैं; परन्तु दाहिना फुसफुस बायें से कुछ बड़ा होता है, क्योंकि हृदय बायीं ओर होने के कारण कुछ स्थान घेर लेता है। हवा की नली मुख से दोनों फुसफुसों में प्रवेश करती है। यह नली ४ इंच लंबी और एक इंच चौड़ी होती है।

फेफड़े का मुख्य कार्य रक्त को शुद्ध करना है। यदि आपको कभी चोट लगने से नीले रंग का रक्त बहा हो तो आपने देखा होगा कि वह हवा लगने से लाल रंग का हो जाता है। इसका कारण यह है कि हवा में ऑक्सीजन (Oxygen) होता है। हृदय से जो अशुद्ध रक्त फुसफुसों में जाता है, वह वहाँ हवा से बहुत सूक्ष्म नलियों द्वारा मिलता है। हवा में जो ऑक्सीजन का अंश रहता है, वह रक्त की सम्पूर्ण अशुद्धियों को दूर कर देता है। रक्त में जो कारबोनिक-एसिड (Carbonic acid) होता है, वह हवा में आ जाता है। यही कारण है कि हमको सदा शुद्ध वायु की आवश्यकता पड़ती है। यदि हम अशुद्ध हवा में साँस लेते

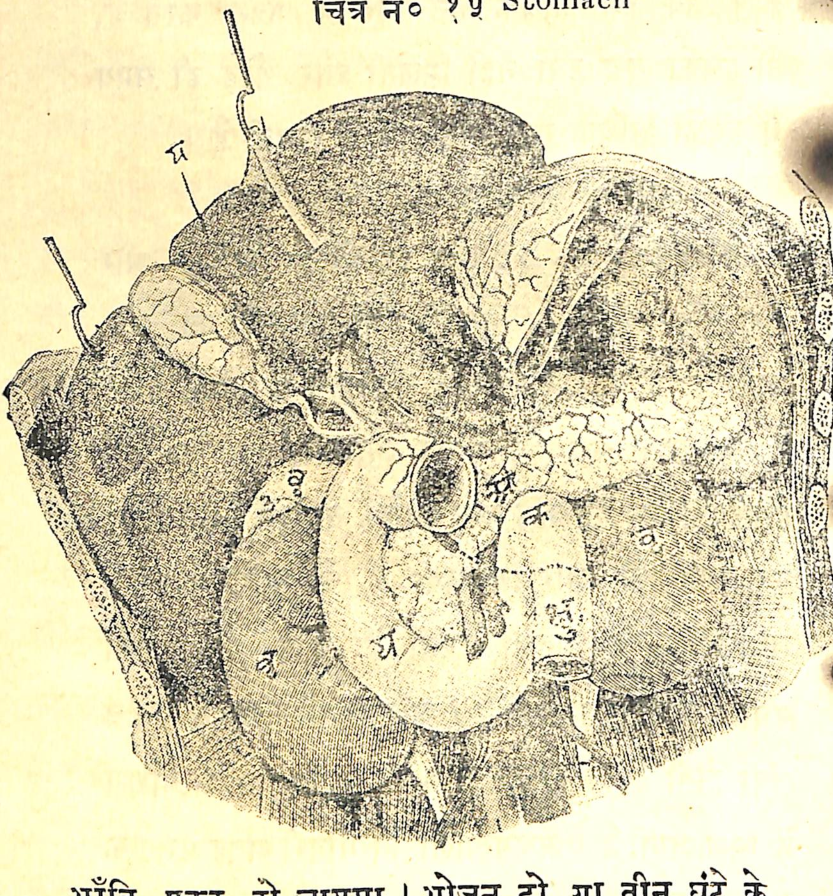
रहें, तो हमारा रक्त कदापि शुद्ध नहीं होगा और इसी कारण हम सदा रोगी बने रहेंगे। मुख से जो हवा बाहर निकलती है, वह गर्म और भाफ युक्त होती है। जब हम अधिक जन-समूह में प्रवेश करते हैं, तो हमको शुद्ध हवा नहीं मिलती और थोड़े ही समय में हमको अधिक गर्मी मालूम पड़ने लगती है।

मेदा व आमाशय (Stomach)

देखो चित्र नं० १५ जब हम भोजन करते हैं और जल पीते हैं तो वह मुख से अन्नप्रणाली की ओर जाता है। यह अन्नप्रणाली आमाशय में प्रविष्ट होती है। मुख में एक प्रकार की गिल्टियाँ (Glands) होती हैं। जब हम कोई वस्तु खाते हैं तो इन ग्रन्थियों से एक प्रकार की लार निकलती है, जो खाद्य पदार्थ में मिलकर उसको पतला करती है- और भोजन को पचाने में सहायता देती है। अन्नप्रणाली लगभग ९ इंच लंबी होती है, जो उदर प्रांत में पहुँच कर आमाशय में मिल जाती है। अन्नप्रणाली की भीतरी सतह पर एक चिकनी झिल्ली का अस्तर चढ़ा रहता है। आमाशय में

यही झिल्ली बहुत कोमल और गुलाबी रंग की होती है। भोजन किस भाँति पचता है और उसमें क्या-क्या परिवर्तन होते हैं यह आपको सातवें अध्याय में भली-

चित्र नं० १५ Stomach



भाँति प्रकट हो जायगा। भोजन दो या तीन घंटे के

पश्चात् आमाशय से छोटी अँतड़ियों (Small intestines) में पहुँचता है। वहाँ से वह बड़ी अँतड़ियों में जाकर एकत्रित होता है। अँतड़ियों में दो प्रकार के रस भोजन को पचाने में सहायता करते हैं। एक अग्न्याशय (Pancreas) नामक ग्रंथि से आता है और दूसरा यकृत (Liver) से आता है, जिसको पित्त (Bile) कहते हैं। आमाशय की भीतरी सतह में बहुत सिकुड़न होती है और उसके भीतर मनुष्य के दाँतों की भाँति छोटी-छोटी मांस की गिल्टियाँ होती हैं, जो भोजन को पतला लेई के सदृश बना देती हैं. (देखो चित्र नं० १५)

यकृत (Liver)

यह भूरे और बहुधा लाल या पीले रंग की सबसे बड़ी ग्रन्थि है, जो आमाशय के दाहिने ओर पशु काओं के नीचे स्थित है। यह एक फुट लंबा, ४ इंच चौड़ा और दो इंच मोटा होता है। मनुष्य के शरीर में इससे बड़ा अन्य अंग नहीं है। इसके कई भाग होते हैं। इसका दाहिना भाग अधिक बड़ा और मोटा होता है। यकृत का प्रथम कार्य, जैसा कि पहले कहा

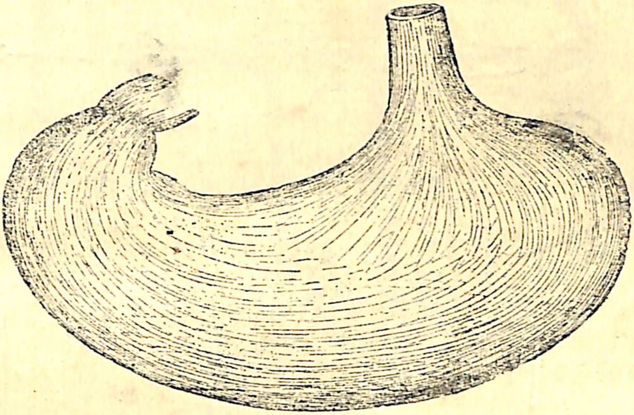
जा चुका है भोजन में पित्त रस को सम्मिलित करके उसको पचाने में सहायता देना है। जब आमाशय में भोजन नहीं रहता तो यह रस एक ग्रन्थि में जमा रहता है और आवश्यकता के समय उसमें से निकल कर आमाशय में चला जाता है। यकृत का दूसरा कार्य शरीर में उत्पन्न हुई विषैली वस्तुओं का नाश करना है। शक्कर जो भोजन के साथ आमाशय में जाती है, वह रक्त के द्वारा हमारे शरीर के प्रत्येक टिसू (Tissue) में यकृत ही के द्वारा पहुँचती है। शक्कर के जलने से हमारे शरीर में काम करने की शक्ति उत्पन्न होती है। अधिक शक्कर के उपयोग से यकृत ख़राब भी हो जाता है, परन्तु बिना शक्कर के यकृत कुछ कार्य नहीं कर सकता। देखो चित्र नं० १५.

प्लीहा (Spleen)

इसको तिल्ली भी कहते हैं। यह आमाशय के बायें ओर एक लंबी और चपटी ग्रन्थी है। इसका रंग लाल और काला मिश्रित होता है। साधारणतया यह ५ इंच लंबी और ३½ इंच चौड़ी होती है;

परन्तु बहुत दिन तक ज्वर आने से यह बढ़ जाती है। यह कोमल और स्पञ्ज की तरह होती है। उसमें श्वेत वर्ण की

चित्र नं० १६

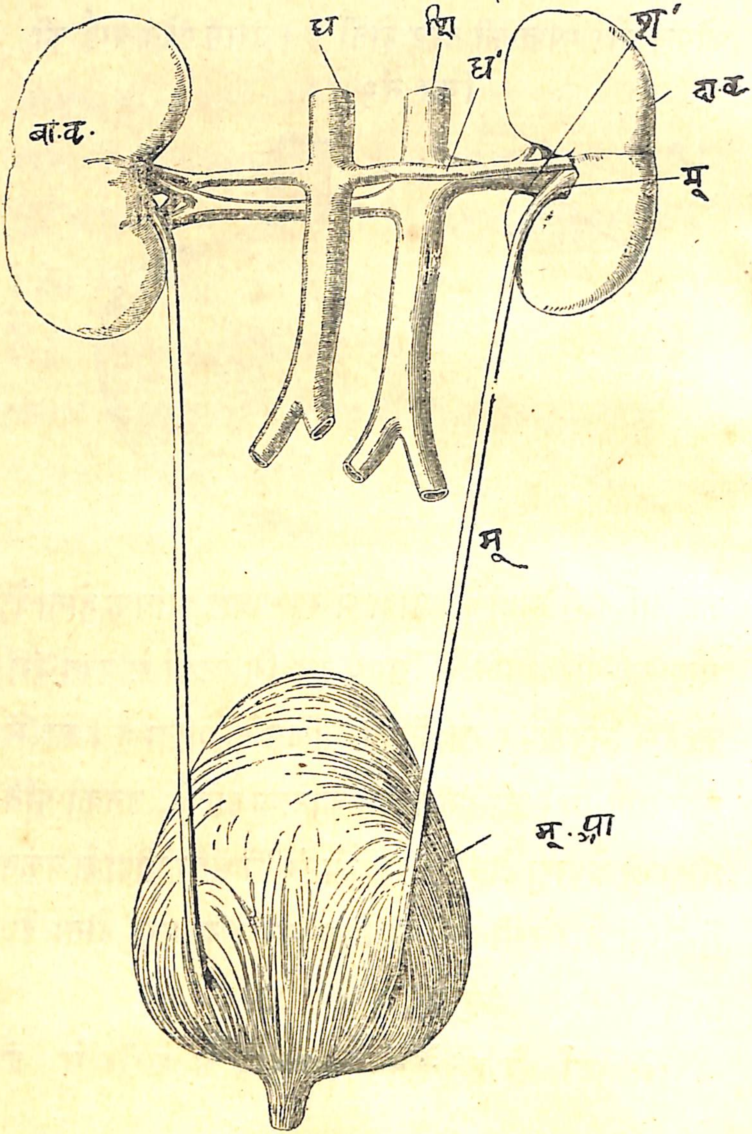


कई गिल्टियाँ होती हैं। प्लीहा में रक्त-प्रवाह अधिक होता है और रक्त-परिभ्रमण के समय इन गिल्टियों से श्वेत रंग का रस निकलकर रक्त में सम्मिलित हो जाता है। रक्त में श्वेत वर्ण या विना रंग के जो कीटाणु होते हैं, उनकी पूर्ति प्लीहा ही के द्वारा होती है। रक्त का रंगीन भाग प्लीहा से यकृत में जाता है। इसी कारण पित्त का रंग हरा होता है.

वृक्क (Kidney)

इसे गुर्दा भी कहते हैं। मनुष्य के शरीर में दो

चित्र नं० १७ वृक्क, गवीनी, मूत्राशय आदि



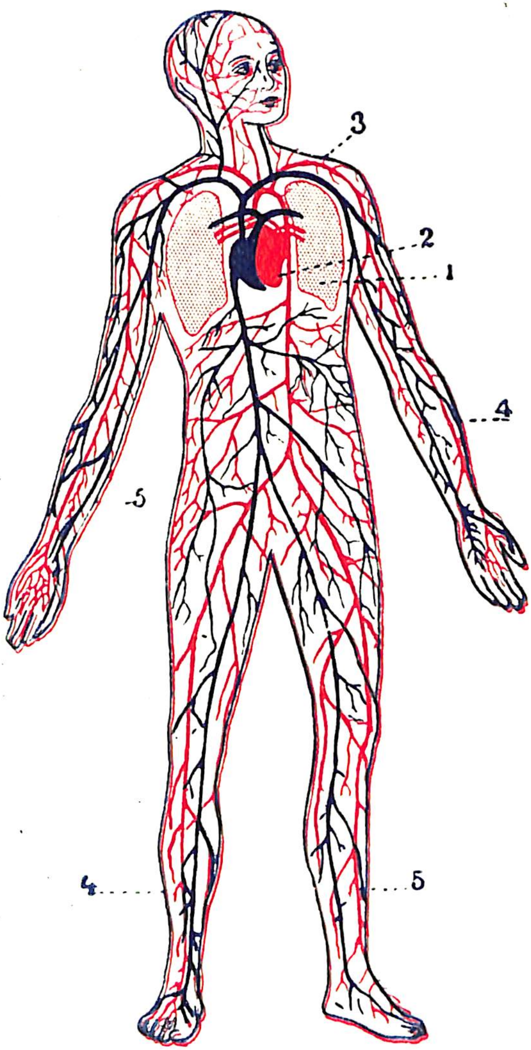
वृक्क होते हैं। इनका रंग बैंगनी होता है और आकार में प्रत्येक ४ इंच लंबे और २½ इंच चौड़े होते हैं। हर एक वृक्क से एक नली मूत्राशय तक जाती है, जो लगभग १६ इंच लंबी और पतले कलम के सदृश मोटी होती है। इसको गवीनी (Ureter) कहते हैं। वृक्क में विषैला जल रक्त से अलग होकर मूत्र बन जाता है और गवीनी द्वारा मूत्राशय में पहुँचता रहता है और वहीं जमा रहता है। मूत्राशय घटता-बढ़ता रहता है। यह कूल्हे की अस्थि के केन्द्र में स्थित है और जब वह मूत्र से भर जाता है तब दबाने से उसमें पीड़ा होने लगती है। मूत्र को रोकना अत्यन्त हानिकारक है; क्योंकि ऐसा करने से नाना प्रकार के रोग उत्पन्न हो जाते हैं।

पाँचवाँ अध्याय

रक्त-परिभ्रमण

रक्त-परिभ्रमण का मुख्य कारण हृदय की गति है। जब हृदय की गति बंद हो जाती है तो मनुष्य की मृत्यु हो जाती है। डॉक्टर और वैद्य इस बात की जाँच नाड़ी देख कर कर लेते हैं। इससे यह भी ज्ञात हो जाता है कि हृदय की गति मन्द है या तीव्र। जब मनुष्य खूब स्वस्थ होता है, तब हृदय और नाड़ी की गति क्रम से एक मिनट में १५ और ७५ मानी गई है। हृदय का मुख्य कार्य सम्पूर्ण शरीर को रक्त पहुँचाना है। इसलिये उसे रक्त-परिभ्रमण का केन्द्र कहा जाय तो अनुचित्त न होगा। हृदय नलियों द्वारा सारे शरीर में रक्त पहुँचाता है। ये नलियाँ तीन प्रकार की होतीं हैं। प्रथम, धमनी (Arteries), इनमें लाल रंग का रक्त रहता है। यही रक्त शरीर के समस्त भागों को भोजन का अंश पहुँचाता है। यह शुद्ध रक्त होता है। इसमें भोजन और

रक्त-परिभ्रमण.



चित्र नं० १८

ऑक्सीजन का अंश अधिक रहता है। शरीर के सम्पूर्ण विषैले पदार्थ और अन्य अशुद्धियाँ रक्त की इन्हीं नलियों द्वारा बाहर निकल जाती हैं। यह परिवर्तन इस प्रकार होता है, रक्त बहुत सूक्ष्म नलियों द्वारा प्रत्येक अंग को पोषण पहुँचाता है। इन सूक्ष्म नलियों को अंग्रेज़ी में केपिलरीज़ (Capillaries) कहते हैं। केपिलरीज़ से निकल कर रक्त अशुद्ध हो जाता है, अर्थात् अपने साथ शरीर की अशुद्धियों और विषैली वस्तुओं को ग्रहण कर लेता है और नीले रंग का होकर दूसरे प्रकार की नलियों द्वारा फिर हृदय में प्रवेश करता है। अशुद्ध रक्त की ये नलियाँ शिरा (Veins) कहलाती हैं। इस भाँति धमनी (Arteries) शुद्ध रक्त की नलियाँ हैं और शिरा (Veins) अशुद्ध रक्त की। केपिलरीज़ (Capillaries) अत्यन्त सूक्ष्म नलियाँ हैं, जो इन दोनों को आपस में मिलाती हैं।

यह हम पहले ही बता चुके हैं कि हृदय में चार कोठरियाँ होती हैं—१-दाहिना अलिन्द (Right auricle), २-बायाँ अलिन्द (Left Auricle), ३-दाहिना

निलय (Right ventricle) और ४-बायाँ निलय (Left ventricle) (देखो चित्र नं० १५)

शिरा (Veins) का सम्पूर्ण रक्त एकत्रित होकर दाहिने अलिन्द में आता है तत्पश्चात् वह दाहिने निलय में जाता है । यहाँ से वह नलियों द्वारा फेफड़ों में पहुँचता है। जो हर समय शुद्ध वायु को खींचते रहते हैं। इस भाँति वायु का प्रभाव रक्त पर पड़ता है और वह शुद्ध हो जाता है। अर्थात् कारबोनिकएसिड गेस और अन्य विषैले पदार्थ जो शरीर में से रक्त में प्रविष्ट हो जाते हैं, वायु द्वारा बाहर निकल जाते हैं। फेफड़ों से शुद्ध रक्त निकल कर सर्वप्रथम हृदय के बायें ओर बायें अलिन्द में जाता है; फिर बायें निलय में और वहाँ से अओर्टा (Aorta) द्वारा समस्त शरीर में। जब रक्त एक कोठरी से दूसरी कोठरी में प्रविष्ट होता है तो उसके मध्य का किवाड़ (Valve) खुल जाता है, परन्तु जब वह वहाँ के फेफड़े में जाने लगता है तब वह किवाड़ बन्द हो जाता है। इस कारण रक्त फिर पहली कोठरी में वापस नहीं आ सकता।

हृदय का फैलना और सिकुड़ना हृदय की गति कहलाती है। चारों भागों की गति प्रत्येक मनुष्य में भिन्न-भिन्न है। शीघ्र चलने और व्यायाम करने से हृदय की गति तीव्र हो जाती है। स्वस्थ शरीर की उष्णता ९८.४ होती है, जो ताप-मापक यंत्र (Thermometer) द्वारा मापी जा सकती है। रक्त समस्त शरीर में केवल आध मिनट में भ्रमण कर लेता है (देखो चित्र नं० १८)।

धमनी में रक्त फ़व्वारे के सदृश झटके के साथ प्रवाहित होता है। परन्तु शिरा में क्रमशः धीरे-धीरे नालियों के सदृश बहता है। धमनी अधिकतर चर्म के भीतरी भाग में होती है और शिरा चर्म के ऊपरी भाग में नीले रंग की होती है और चमकती है।

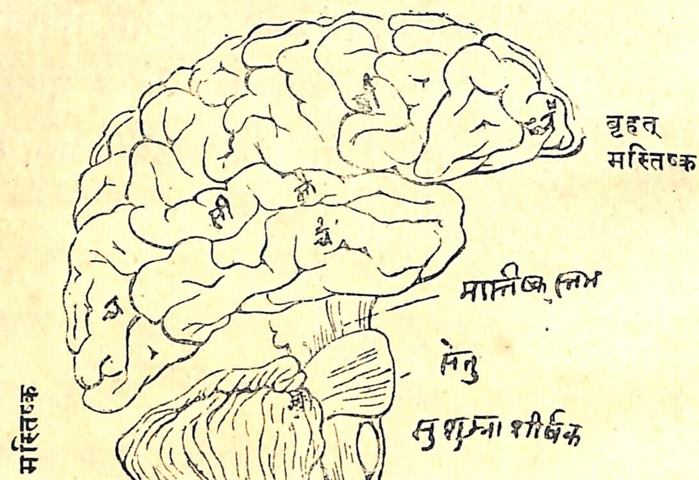
छठवाँ अध्याय

मस्तिष्क और नाड़ियाँ

मस्तिष्क सिर की अस्थियों के बीच में सुरक्षित है। यह झिल्लियों से लिपटा हुआ है। मस्तिष्क तीन भागों में विभक्त है:—

प्रथम, सबसे बृहत् और मुख्य भाग जिसे बृहत्

चित्र नं० १९



मस्तिष्क भी कहते हैं, अंडे के सदृश आकार का है।

यह दो भाँति के गूदों से बना है, एक सफ़ेद रंग वर्ण का है और दूसरा भूरे रंग का । अँगरेज़ी में इसको सेरीब्रम (Cerebrum) अथवा हृदयमस्तिष्क कहते हैं। इसके ऊपरी पृष्ठ पर बहुत गहरी सिकुड़न हैं। जिनके बीच-बीच में छोटी-छोटी बहुत सी सिकुड़न होती हैं। प्रत्येक छोटे से छोटे भाग से शरीर के किसी न किसी क्रिया का संबंध होता है।

दूसरा, मस्तिष्क का वह भाग है, जिसे लघु मस्तिष्क (Cerebellum) कहते हैं। यह बृहत् मस्तिष्क के पीछे और नीचे की ओर जुड़ा हुआ होता है। इसमें भी सिकुड़न होती हैं। यह बृहत् मस्तिष्क के सातवें भाग के बराबर है। यह भी सफ़ेद और भूरे रंग के गूदों से बना है, परन्तु इसकी और दीर्घ मस्तिष्क की बनावट में थोड़ा अन्तर है। यदि इसको काट कर पृथक् कर दिया जाय तो न हम सीधे खड़े रह सकते हैं और न ठीक चल ही सकते हैं।

तीसरा वह भाग है, जो लघु मस्तिष्क के नीचे होता है। यह लटकती हुई सफ़ेद रंग की ठोस नली दृष्टि-गोचर होती है। इसको सुषुम्ना (Spinal bulb) कहते

हैं। यह सवा इंच लंबा होता है, इसकी आकृति लघु और दीर्घ मस्तिष्क के सदृश ही है; परन्तु इसमें अन्तर इतना ही है कि इसमें श्वेत वर्ण के गूदे की अपेक्षा भूरे रंग का गूदा अधिक परिमाण में रहता है। इसके दोनों ओर से नाड़ियाँ निकलकर शरीर के प्रत्येक अंग में जाती हैं (देखो चित्र नं० १९)। आप लोगों को यह बतलाया जा चुका है कि मस्तिष्क के प्रत्येक भाग में सिकुड़न होती हैं और इन सिकुड़न के बीच-बीच में कुछ गहरी नालियाँ-सी होती हैं, जो लगभग एक इंच गहरी होती हैं। इन्हीं के द्वारा मनुष्य की बुद्धि का परिचय मिलता है। जिस मनुष्य का मस्तिष्क साफ़-सपाट सिकुड़न-रहित होता है, वे बुद्धिहीन होते हैं। यही दशा छोटे-छोटे जीव-जन्तुओं की भी है। बड़े पशुओं में जैसे-हाथी के मस्तिष्क में ये सिकुड़न अधिक और गहरी पाई जाती हैं, और छोटे बालकों में ये कम गहरी होती हैं; परन्तु जैसे-जैसे उनकी बुद्धि तीव्र होती जाती है, वैसे-वैसे ये सिकुड़न भी अधिक और गहरी होती जाती हैं। मस्तिष्क बुद्धि का केन्द्र है और हमारे शरीर के प्रत्येक कार्यक्रम इसी के

द्वारा होते हैं। जब हम सड़क पर चलते हैं और कोई कीड़ा हमारे नेत्रों के सम्मुख आजाता है तो पलकें तुरन्त स्वयं ही बंद हो जाती हैं। इस प्रकार बहुत से कार्य ऐसे हैं, जो स्वयं होते रहते हैं। बृहत् मस्तिष्क को अलग कर देने से मनुष्य को किसी बात का भय नहीं लगता। वह पागलों के सदृश हो जाता है, समुद्र में कूदने को तत्पर हो जाता है, उसे अपने प्राण खो देने का तनिक भी भय नहीं रहता। यदि आप किसी मेंढक के मस्तिष्क को पृथक् कर दें और किसी स्थान पर उसे बैठा दें तो वह उसी स्थान पर बैठा रहेगा। यदि उसे डराने का प्रयत्न करेंगे, तो वह डरेगा भी नहीं।

अब हम आपको यह बतलाना चाहते हैं कि हमारे शरीर के हर एक अंग अपना-अपना कार्य स्वयं किस भाँति किया करते हैं। यहाँ तक कि यदि सोते समय कोई मक्खी, मच्छर या अन्य कीड़ा हमारे शरीर पर बैठ जाता है तो तत्काल ही हमारा हाथ उस स्थान पर पहुँच जाता है और उसे हटा देता है। जब हम कुछ लिखने का विचार करते हैं तो हाथ तुरन्त ही क़लम-

दावात पर पहुँच जाता है। इसी भाँति यदि अन्य व्यक्ति हमारे शरीर को स्पर्श करता है या कोई शस्त्र प्रहार करता है तो उसी क्षण हाथ शरीर की रक्षा के लिये उठ जाता है। ये सब कार्य मस्तिष्क द्वारा ही संचालित होते हैं। मस्तिष्क से नाड़ियों की ३१ जोड़ी निकलती हैं। प्रत्येक जोड़ी में एक के द्वारा मस्तिष्क में सूचना पहुँचती है और दूसरी के द्वारा मस्तिष्क से सूचना शरीर के अन्य भागों में पहुँचती है। यदि हम किसी अगली नाड़ी को छेड़ें तो उन अंगों में जिनसे कि उसका सम्बन्ध है, उनमें संचालन उत्पन्न कर देगी। यदि हम पिछली नाड़ियों को छेड़ें, तो उनमें पीड़ा होने लगेगी, किसी प्रकार का संचालन नहीं होगा। किसी जन्तु की अगली नाड़ियाँ काट दी जायँ तो उसकी संचालन-शक्ति नष्ट हो जायगी। यदि पिछली नाड़ियाँ काट दी जायँ तो उसको किसी प्रकार की भी पीड़ा मालूम न होगी। इसलिये मस्तिष्क संचालन और पीड़ा दोनों का अधिपति है।

यह बताया जा चुका है कि मस्तिष्क में दो प्रकार के गूदे होते हैं, एक सफ़ेद और दूसरा भूरा। भूरे रंग की

नाड़ियों द्वारा स्पर्श का ज्ञान होता है और सफ़ेद रंग की नाड़ियों द्वारा संचालन की आज्ञा प्रत्येक अंग को मिलती है। ये नाड़ियाँ बिजली के तार की भाँति हमारे समस्त शरीर में फैली हुई हैं जो मस्तिष्क को प्रत्येक अंग की सूचना देती हैं और मस्तिष्क से अन्य अंगों को सूचना पहुँचाती हैं। शरीर का कोई भाग ऐसा नहीं है, जहाँ ये नाड़ियाँ न पाई जाती हों। मस्तिष्क में सूचना आने-जाने का कार्य बहुत शीघ्र होता है। यह परिमाण लगाया गया है कि एक सेकंड में ६५ बार यह क्रिया होती है।

जब स्पर्श की नाड़ियाँ लघु मस्तिष्क से निकलती हैं, तब एक ओर के भूरे रंग के भाग से दूसरे ओर के भूरे रंग के भाग में जाकर बृहत् मस्तिष्क में मिल जाती हैं; परन्तु संचालन की नाड़ियाँ उसी ओर जाती हैं, जिस अंग से वे आती हैं। इस बात से यह प्रतीत होता है कि यदि लघु मस्तिष्क बीच से काट दिया जाय तो दोनों ओर की स्पर्श-शक्ति की नाड़ियाँ बेकार हो जायँगी और संचालन की नाड़ियों में कोई परिवर्तन न

होगा। बृहत् मस्तिष्क हृदय की धड़कन, फेफड़ों के सिकुड़ने-फैलने और मुख में राल उत्पन्न करने का मुख्य केन्द्र है। यदि मस्तिष्क को किसी भाँति की हानि पहुँचती है तो इन सब अंगों में भी अन्तर पड़ जाता है।

अब आप भली भाँति समझ गये होंगे कि जब हमारे शरीर पर कोई प्रहार करता है तो हमारे हाथ क्यों तुरन्त उठ जाते हैं ? नेत्र प्रहार करनेवाले व्यक्ति को देखते हैं और मस्तिष्क को शीघ्र इस घटना की सूचना देते हैं। मस्तिष्क हाथों को आज्ञा देता है कि रक्षा करने का प्रयत्न करो और वे तुरन्त रक्षा के लिये ऊपर को उठ जाते हैं और हमको इस बात का तनिक भी ध्यान नहीं रहता कि यह सब कार्य किस भाँति हो रहा है। प्रत्येक कार्य जैसे बोलना, दौड़ना, सूँघना, चखना इत्यादि मस्तिष्क की आज्ञा ही से होते हैं।

सातवाँ अध्याय

भोजन, जल और वायु

भोजन—हर एक मनुष्य भोजन करता है; परन्तु उसकी समझ में यह नहीं आता कि उसको भोजन की आवश्यकता क्यों पड़ती है। आप यह जानते हैं कि हम सदा काम करते रहते हैं, हमारे शरीर के अन्दर भी मशीन के सदृश कार्य होता रहता है और हमारे शरीर से बहुत-सी वस्तुएँ बाहर निकलती रहती हैं। जैसे, फेफड़ों से कारबन डायोक्साइड (Carbon-dioxide) और जल के परमाणु, शरीर से पसीना और वृक्क और मूत्राशय द्वारा जल और नाइट्रोजन के परमाणु निकलते हैं। हमारे शरीर के सूक्ष्म परमाणु (Tissues) सदा टूटते रहते हैं। इन सब कमी की पूर्ति के लिये हमको भोजन की आवश्यकता पड़ती है। जब यह कमी अधिक हो जाती है तो मस्तिष्क को उसी क्षण सूचना मिलती है और उसका प्रभाव आमाशय पर पड़ता है, तब हम यह कहने लगते हैं कि हमको भूख लगी है। हमारे शरीर की मशीन रेल

के इंजिन के सदृश है। जिस भाँति उसे कोयले और पानी की आवश्यकता पड़ती है उसी प्रकार हमको भी जल और भोजन की आवश्यकता पड़ती है। अन्तर केवल इतना ही है कि इंजिन ठंढा हो जाने पर पुनः गर्म हो सकता है; परन्तु मनुष्य मर कर जीवित नहीं हो सकता। इंजिन पानी और कोयले की सहायता से चलता है और मनुष्य भोजन और जल के सहारे।

भोजन दो प्रकार के होते हैं। एक वनस्पति और दूसरा मांस इत्यादि। अधिकांश मनुष्य केवल वनस्पति ही खाकर जीवन व्यतीत करते हैं; परन्तु कुछ मनुष्य ऐसे भी हैं जो मांस इत्यादि का प्रयोग करते हैं। मनुष्य को पूर्ण स्वस्थ रहने के लिये निम्न-लिखित भोजन की आवश्यकता है:—

प्रोटेड्स (Proteids)	३. ५ औंस
घी और चर्बी इत्यादि (Fats)	१. ८ औंस
कारबोहाइड्रेट (Carbohydrates)	१७. ५ औंस
नमक (Salts)	१ औंस
जल (Water)	१०० औंस

(लगभग २½ औंस १ छटाँक के बराबर होता है)

प्रोटेड्स (Proteids) शरीर के लिये बहुत आवश्यक है। मूत्र इत्यादि के द्वारा नाइट्रोजन (Nitrogen) का बहुत-सा भाग हमारे शरीर से निकल जाता है। इस कमी को पूरी करने के लिये हमको उन खाद्य पदार्थों की विशेष आवश्यकता पड़ती है, जिनमें प्रोटीन उपस्थित हो, जैसे अंडे की सफ़ेदी, बादाम और दूध आदि। जो मनुष्य वनस्पति ही खाते हैं, उनको दूध पीना अत्यन्त आवश्यक है। विशेष कर विद्यार्थियों में यह देखा गया है कि जो दूध का प्रयोग करते हैं, वे उन विद्यार्थियों की अपेक्षा अधिक बलवान् और स्वस्थ होते हैं, जो दूध उपयोग में नहीं लाते या मांसाहारी हैं। भारतवासियों का मुख्य भोजन वनस्पति ही है; परन्तु यहाँ की अधिक जनसंख्या ऐसी है, जिसे दूध प्राप्त नहीं होता और जिनको थोड़ा-बहुत मिलता भी है तो वह ख़ालिस नहीं होता, दूध उबाल कर, भोजन करने के दो घंटे बाद, थोड़ा गर्म-गर्म पीना चाहिए नहीं तो दूध भली प्रकार नहीं पचेगा। दूध

भोजन के साथ भी उपयोग किया जा सकता है। दूध प्रतिदिन कम-से-कम एक बार अवश्य ही पीना चाहिए। एक-एक घूंट करके पीने का तरीक़ा उत्तम माना गया है। मस्तिष्क से काम करनेवालों के लिये गाय का दूध विशेष लाभदायक है। भैंस के दूध में घी का अंश अधिक रहता है।

कारबोहाइड्रेट्स (Carbohydrates)—यह अधिकतर वनस्पति, फल आदि में पाया जाता है, जैसे स्टार्च (Starch), शक्कर (Sugar), जो, गेहूँ, चाँवल, दाल इत्यादि में पाया जाता है। शक्कर गन्ने से भी निकाली जाती है। इस प्रकार के भोजन शरीर में बल और उष्णता उत्पन्न करने के लिये आवश्यक हैं। यदि यही खाद्य वस्तुएँ घी और तेल के साथ उपयोग में लाई जायँ तो अधिक लाभदायक हो जाती हैं और चिकने पदार्थ भी शीघ्र पच जाते हैं, यदि वे उचित रीति से प्रयोग में लाये जायँ। वनस्पति, फल, अनाज आदि खाद्य पदार्थ सस्ते होते हैं। इस कारण मनुष्य इन्हें अधिक परिमाण में खाते हैं और यही कारण

है कि दरिद्र मनुष्यों के भोजन की सामग्री अधिक परिमाण में होती है, जिससे कि चिकनाई भी उसी के द्वारा प्राप्त हो जाती है। इस भाँति के भोजन से मनुष्य पूर्ण स्वस्थ रह सकता है।

घी, चर्बी आदि (Fats)—इनमें वे ही परमाणु सम्मिलित हैं जो कारबोहाइडे्ट्स में विद्यमान हैं। इनमें मुख्य ये हैं, कारबन (Carbon), हाइड्रोजन (Hydrogen) और ऑक्सीजन (Oxygen)। परन्तु ये परमाणु अधिक बलदायक होते हैं और इसी कारण थोड़े परिमाण में खाये जाते हैं। इनका अधिक अंश हमारे शरीर में सम्मिलित हो जाता है। मक्खन, घी और अन्य प्रकार के तेल इसमें शामिल हैं। इन पदार्थों से शरीर में बल और उष्णता उत्पन्न होती है। ठंढे देश के रहनेवालों के लिये इन वस्तुओं का प्रयोग अधिक आवश्यक है।

नमक (Salts)—बहुत कम मनुष्य ऐसे मिलेंगे जो नमक न खाते हों। यह केवल भोजन को स्वादिष्ट ही नहीं बनाता, पर हमारे शरीर में प्रविष्ट होकर एक

कमी की पूर्ति करता है और साथ ही साथ भोजन के पचाने में सहायता पहुँचाता है। यह फासफेट्स (Phosphates) की दशा में अस्थियों के लिये बहुत आवश्यक है। बहुत से खाद्य पदार्थ ऐसे हैं, जिनमें स्वभाव से ही नमक रहता है। भोजन बनाते समय भी नमक प्रयोग में लाया जाता है। नमक से मनुष्य को जो-जो लाभ होते हैं, वे लेखन-शक्ति के परे हैं। केवल इतना लिखना ही पर्याप्त है कि नमक भिन्न-भिन्न दशाओं में हमारे शरीर में विद्यमान रहता है और उसमें नाना प्रकार के परिवर्तन होते हैं, जो हमारे शरीर को जीवित रखने के लिये परमावश्यक हैं। उचित परिमाण में मनुष्य और जानवर दोनों को नमक प्रयोग में लाना चाहिए।

जल (Water)—वायु के पश्चात् जल मनुष्य के जीवित रहने के लिये अत्यन्त आवश्यक है। शरीर का दो-तिहाई वज़न केवल जल है। जल भोजन को पचाने में भी सहायता देता है, परन्तु उसकी सबसे अधिक आवश्यकता रक्त को पतला रखने के लिये होती है। बहुत से

मनुष्य शुद्ध जल के बदले सोडा, चाय आदि भिन्न-भिन्न प्रकार के पेय पदार्थों का उपयोग करते हैं। कुछ लोग मदिरा भी पीते हैं; परन्तु ये शरीर के लिये अत्यन्त हानिकारक हैं। शुद्ध जल हमको वर्षा से प्राप्त होता है। वर्षा का ही जल कुओं और तालाबों में पहुँचता है। नदियों और झरनों के द्वारा भी जल मिल सकता है। पानी जो पीने के काम में आता है, वह गरिष्ठ नहीं होना चाहिए। गरिष्ठ जल वह है जिसमें साबुन के झाग अच्छी भाँति नहीं उठते। पीने का पानी सदा स्वच्छ स्थान से लाना चाहिए, जिसमें किसी प्रकार की दुर्गन्धि न आती हो, जिसमें वृक्षों की पत्तियाँ गिर कर सड़ती न हों। जहाँ तक हो सके सदा पानी को उबाल कर या महीन कपड़े से छान कर प्रयोग में लाना चाहिए। उसे सदा स्वच्छ मिट्टी के घड़े या किसी भी स्वच्छ बर्तन में ढक कर रखना चाहिए। इन पात्रों को भी कुछ समय पश्चात् बदल देना चाहिए। शराब, ताड़ी, भंग इत्यादि मादक द्रव्यों का कभी प्रयोग नहीं करना चाहिए। इन वस्तुओं से

हृदय और मस्तिष्क दोनों निर्बल हो जाते हैं और थोड़े ही समय में शरीर बिलकुल नष्ट हो जाता है।

खाने और पीने की वस्तुओं पर विशेष ध्यान रखना चाहिए। कम भोजन करने से शरीर का बल स्थिर नहीं रह सकता और अधिक खाने से नाना प्रकार के रोग उत्पन्न हो जाने का भय रहता है। अजीर्ण और कोष्ठबद्ध (क़ब्ज़) भोजन की ही ख़राबियों से उत्पन्न होते हैं। भोजन स्वच्छ रीति से स्वच्छ पात्रों में बनाना चाहिए। मक्खी, धूल, कूड़ा-कर्कट आदि के बचाव के लिये उचित प्रबंध रखना चाहिए। भोजन करने का समय भी नियत होना चाहिए। दिन में कम-से-कम दो बार, और अधिक-से-अधिक चार बार भोजन करना चाहिए। गेहूँ की रोटी, दाल, हरी तरकारियाँ, फल इत्यादि ऐसे पदार्थ हैं, जो शरीर को पूर्णतः बलवान् रखते हैं। चाँवल अच्छा खाद्य पदार्थ नहीं है, इससे एक प्रकार का रोग उत्पन्न हो जाता है, जिसको बेरी बेरी (Beri beri) कहते हैं। यदि पुराने चाँवल को और वह भी माँड निकाल कर, खाया जाय तो अच्छा है और

स्वास्थ्य के लिये भी वह लाभदायक होता है। चाँवल के साथ दाल और तरकारी आदि ऐसे पदार्थ अवश्य उपयोग में लाने चाहिएँ। बहुधा बालकों को बाज़ार की चाट और मिठाई खाने की बुरी टेव पड़ जाती है। ऐसी आदतें जहाँ तक हो कदापि न डालनी चाहिए। इनसे अनेक प्रकार की बीमारियाँ उत्पन्न हो जाती हैं। विशेषकर हैज़े के दिनों में तो बाज़ार से लाकर कोई भी वस्तु नहीं खानी चाहिए। हर समय पान खाना भी बुरा है। छोटे बालकों को तो पान कदापि न खाना चाहिए। इससे दाँत ख़राब हो जाते हैं और दाँत के ख़राब होने से उदर के कई रोग उत्पन्न हो जाते हैं। दाँतो को प्रतिदिन कम-से-कम दो बार साफ़ करना चाहिए। दाँत साफ़ करने के लिये नीम या कीकड़ की दातून सबसे उत्तम है। अच्छे मंजन भी प्रयोग में लाये जा सकते हैं। बहुत मिर्च या गरम मसाला भी स्वास्थ्य के लिये हानिकारक है। छोटे बच्चों को चटपटी चाट और मिर्च से बचाना चाहिए। सिगरेट और तम्बाकू पीना भी हानिकारक है। तम्बाकू में एक

प्रकार का विष रहता है, जो शरीर को दुर्बल और रक्त को दूषित कर देता है। प्रायः सभी मादक द्रव्य स्वास्थ्य के लिये हानिकारक हैं और शरीर को दुर्बल बना देते हैं। बहुत से लोगों को चाय पीने की आदत पड़ जाती है, शरद ऋतु में उसका प्रयोग अधिक हानिकारक नहीं होता; परन्तु ग्रीष्म ऋतु में चाय कदापि न पीना चाहिए। जिन मनुष्यों की ऐसी ख़राब आदतें पड़ गई हों और जो विषैली वस्तुओं का प्रयोग करते हों, उनकी संगत में कभी नहीं रहना चाहिए। वर्ना आपको भी इन बुरी बातों की टेव पड़ जायगी और समस्त जीवन नष्ट हो जायगा।

वायु (Air)—इसमें कई प्रकार की गैस सम्मिलित हैं, जिनमें से मुख्य ये तीन हैं- १ ऑक्सीजन (Oxygen), २ नाइट्रोजन (Niterogen) और ३ कारबनडायोकसाइड (Carbondioxide)। यह आपको विदित हो चुका है कि ऑक्सीजन हमारे शरीर के लिये कितनी लाभदायक है। जब यह गैस हमारे फेफड़ों में पहुँचती है और रक्त में मिलती है, तब रक्त की सब अशुद्धियों को दूर कर उसमें मिल जाती है। आग जलाने के लिये वायु

आवश्यक है। यदि वायु में ऑक्सीजन न हो, तो आग और दिया जलाना असम्भव हो जाय। इसी भाँति हमारे शरीर में उष्णता रखने के लिये वायु में ऑक्सीजन का होना अत्यन्त आवश्यक है। स्वस्थ रहने के लिये शुद्ध और स्वच्छ वायु की विशेष आवश्यकता है। जो मनुष्य स्वच्छ और खुले हुए स्थानों में रहते हैं, वे अधिक स्वस्थ रहते हैं। बन्द कमरों में जहाँ स्वच्छ वायु और सूर्य की रोशनी नहीं जाती या जहाँ धुआँ रहता है, वहाँ रहने से स्वास्थ्य बिगड़ जाता है। प्रायः ऐसे ही मनुष्यों को क्षय-रोग होता है। रात्रि में मुख ढक कर कदापि न सोना चाहिए। कमरे के दरवाज़े और एक-दो खिड़कियाँ सदा खुली रखनी चाहिए। कमरे में रात्रि के समय जलता हुआ दिया रख कर कदापि न सोना चाहिए। ताज़ी हवा में टहलना और व्यायाम करना या अन्य प्रकार के खेल-कूद बालकों के लिये अत्यन्त लाभदायक और परमावश्यक हैं। बालकों को साँझ के समय पढ़ना न चाहिए बल्कि किसी पार्क या मैदान में वायु-सेवनार्थ प्रति दिन जाना चाहिए।

आठवाँ अध्याय

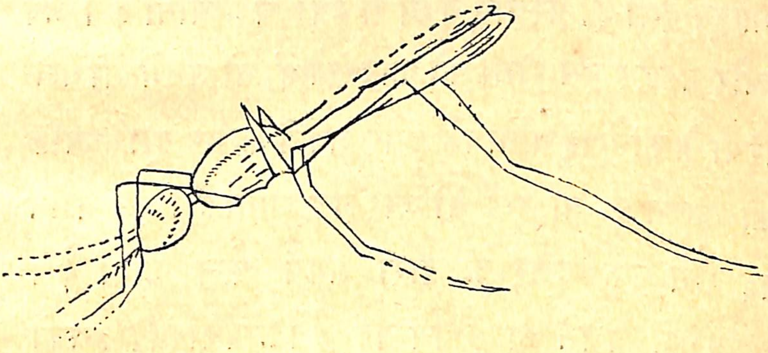
रोग और कीड़े

संसार में कोई व्यक्ति, मक्खी, मच्छर, खटमल, जूँ और पिस्सू इत्यादि कीड़ों को पसंद नहीं करता। अन्य जीवों पर निर्भर रहनेवाले कीड़े (Parasites) न केवल मनुष्य के शरीर का रक्त चूसते और उसी से जीवित रहते हैं; बल्कि ये नाना प्रकार के रोग भी उत्पन्न करते हैं। बहुधा यह देखा गया है कि जिन दिनों में इन कीड़ों की संख्या अधिक होती है उन्हीं दिनों में रोग भी अधिक फैलते हैं। ये कीड़े गन्दे, कम रोशनी और अशुद्ध वायुवाले स्थानों में अधिक पाये जाते हैं। इसी कारण इन कीड़ों द्वारा जो रोग उत्पन्न होते हैं, वे अधिकतर दरिद्र मनुष्यों में ही फैलते हैं। ये कीड़े अपना घर दीवारों और दरवाज़ों के छिद्रों में बनाते हैं और मैले-कुचैले फ़र्श, चटाई और कुर्सी इत्यादि में भी रहते हैं। जब मनुष्य इन वस्तुओं को काम में लाते हैं,

तब ये उन्हें काट लेते हैं और अपना विष उनके शरीर में छोड़ देते हैं । शरीर के जिस अंग पर ये काटते हैं, उसी स्थान पर एक छोटा सा छिद्र हो जाता है, जिसके द्वारा अन्य छोटे-छोटे जीवाणु भी शरीर में प्रविष्ट हो जाते हैं और जिनसे नाना प्रकार के रोग उत्पन्न हो जाते हैं । खुजली के कीड़े चर्म के नीचे बहुत गहराई तक एक छत्ता सा बना लेते हैं और उसी में बढ़ते रहते हैं ।

चित्र नं० २०

मच्छर (Mosquitoes)



(مادہ) آنافی لس

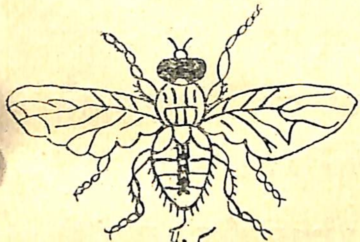
आपने देखा होगा कि वर्षा ऋतु में मच्छर अधिक संख्या में उत्पन्न होते हैं । इसका कारण यह है कि

मच्छर अपने अंडे स्थिर पानी के किनारे रखते हैं। यह पानी वर्षा ऋतु में जहाँ-तहाँ गड्ढों और नालियों में जमा रहता है। यदि यह पानी सदा बहता रहे या किसी तरह बहाकर निकाल दिया जाय तो साथ ही मच्छरों के अंडे भी बह जायँगे। मलेरिया ज्वर (Malaria) यह एक प्रकार का भीषण ज्वर है, जो मच्छर के काटने से ही उत्पन्न होता है। इन मच्छरों को एनोफ़लीज़(Anopheles) कहते हैं। जब ज्वर चढ़नेवाला होता है, तो पहले सर्दी मालूम देती है, पश्चात् तेज़ी से ज्वर चढ़ आता है। जब और मच्छर इस रोगी को काट लेते हैं, तो उनमें भी मलेरिया के कीड़े पहुँच जाते हैं और जब ये मच्छर दूसरे व्यक्ति को काटते हैं, तो उन्हें भी ज्वर चढ़ जाता है। इस भाँति यह रोग एक दूसरे के द्वारा सबमें फैल जाता है। मच्छरों से बचने का उपाय यह है कि यथाशक्ति इनको नष्ट करने का प्रयत्न करना चाहिए। जहाँ पानी एकत्रित हो जाय उसके किनारे मट्टी का तेल डाल देने से उनके अंडे नष्ट हो जाते हैं। सोने के कमरे में धुँआ करके बंद कर देने से भी मच्छर मर जाते हैं। सोते समय मसहरी का

उपयोग में लाने से मच्छर काट नहीं सकते। यदि किसी कारण मसहरी का प्रयोग न हो सके तो मट्टी और मीठे तेल को मिलाकर शरीर पर मलकर सोने से भी मच्छरों से बचाव हो सकता है। यदि मलेरिया हो गया हो, तो रोगी को कुनैन खाने को देनी चाहिए और पश्चात् दूध पिलाना चाहिए। कुनैन से उत्तम इस रोग की दूसरी ओषधि नहीं है। इस ज्वर को रोकने के लिये भी कुनैन का प्रयोग किया जाता है। वर्षा ऋतु में यदा-कदा कुनैन खाते रहने से यह ज्वर कदापि नहीं हो सकता।

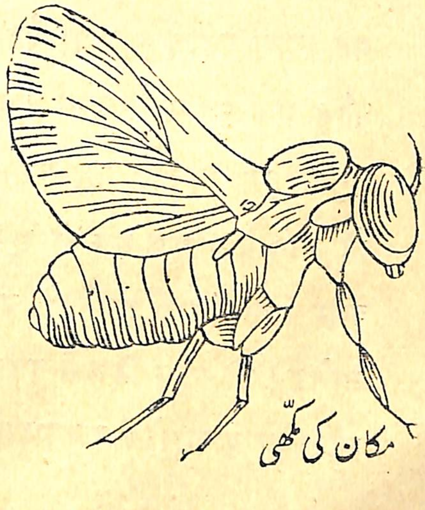
मक्खी (Flies)

चित्र नं० २१



ریت کی مکھی

चित्र नं० २२



مکان کی مکھی

भारतवर्ष में कदाचित् ही कोई घर इनसे रहित होगा। ये बहुत ही भयानक कीड़ी हैं। ये अपने अंडे गन्दी वस्तुओं पर रखती हैं। जैसे—खाद्य, लीद, गोबर और विष्ठा आदि। भारतवर्ष में सबसे अधिक रोग मक्खी ही फैलाती है। जैसे मियादी ज्वर, या मोती-झिरा (Typhoid), हैज़ा (Cholera), संग्रहणी और अतीसार (Diarrhoea and Dysentery) इसी कारण मक्खी हमारी सबसे प्रबल शत्रु है। मक्खी सदा गन्दे पदार्थों पर बैठा करती है, जैसे थूक, क़ै, दस्त आदि। अपने पैरों के द्वारा इन गन्दी वस्तुओं से रोग के कीड़े ले जाकर भोजन की सामग्री पर छोड़ देती है, क्योंकि यह खाद्य पदार्थ पर भी बैठती है। इस प्रकार रोग के कीड़े एक स्थान से दूसरे स्थान पर पहुँच जाते हैं। जब मनुष्य इन वस्तुओं को खाते हैं तो उन्हें भी वही रोग हो जाते हैं। एक मक्खी एक बार १२० अंडे देती है और आठ घंटे में इनमें से छोटे परदार जीव उत्पन्न हो जाते हैं। जो पाँच दिन में बढ़कर पूरी मक्खी हो जाती हैं। भारतीय बाज़ारों में हलवाइयों और फलवालों की दूकानों

पर इन मक्खियों के समूह के समूह दिखलाई पड़ते हैं। मक्खियों से बचने का उपाय यह है कि उनको नष्ट कर दिया जाय। जिन वस्तुओं पर ये अंडे देती हैं उनको दूर एक पृथक् स्थान पर धरती के अंदर गड़वा दिया जाय, या जिस समय तक वह बाहर फिकवाये जायँ उनको किसी बंद पात्र में रखना चाहिए। नालियाँ स्वच्छ रखनी चाहिए और प्रतिदिन पानी से धुलनी चाहिए। मक्खी और उसके अंडे अधिक ठंढ और गर्मी में नष्ट हो जाते हैं।

यदि इस विषय में आपकी म्यूनिसिपेलिटी आपकी सहायता नहीं करती तो आपको स्वयम् अपना बचाव करना चाहिए। यह इस प्रकार हो सकता है कि गोबर, लीद, अन्य सड़ी-गली वस्तुएँ सड़क पर नहीं डालनी चाहिए। उनको एक ढक्कनदार बर्तन में डालते रहना चाहिए और मेहतर के द्वारा शहर के बाहर दूर जंगल में फिकवा देनी चाहिए। दूसरे, रक्षा इस भाँति भी हो सकती है कि खाने-पीने के समस्त पदार्थ सदा ढक कर रक्खे जायँ या जालीदार अल्मारी

में रक्खे जायँ । रसोई घर और सम्पूर्ण मकान को प्रतिदिन फ़िनाइल के पानी से धोयें ।

पिस्सू, खटमल और जूँ

ये छोटे-छोटे कीड़े गन्दे रहने से उत्पन्न हो जाते हैं । जूँ मनुष्य के सिर और कपड़ों में रहती है, खटमल चारपाइयों और कुर्सियों में, पिस्सू फ़र्श और गन्दी

चित्र नं० २३

खटमल



चित्र नं० २४

जूँ



वस्तुओं में। जो मनुष्य साफ़-सुथरे रहते हैं, प्रतिदिन स्नान करते हैं, अपने बालों में कंघा लगाते हैं, उनके जूँ कभी नहीं पड़ती।

ये सब कीड़े मिट्टी के तेल से तुरन्त मर जाते हैं। चारपाइयों में तीन-चार दिन तक मिट्टी का तेल डालकर उन्हें धूप में रखना आवश्यक है। जूँ से नाना भाँति के ज्वर उत्पन्न हो जाते हैं, जैसे काला ज्वर (Relapsing Fever) यह रोग मुज़्फ़रगढ़ और डेरा इस्माइलख़ाँ के ज़िलों में अधिक होता है।

अतएव हम लोगों का यह कर्तव्य है कि अपने शरीर और वस्त्रों को सदा स्वच्छ रक्खें। साबुन और तेल का उपयोग किया करें, ताकि इनसे रोगों से रक्षा हो। हम सब लोगों का यह भी कर्तव्य है कि ऐसे-ऐसे भयानक रोगों को भारत से समूल नष्ट कर दें।

समाप्त
